संस्थापित १८६७ ई०

ओ३म्

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२३ ● अंक १८ ●०१ मई २०१८ ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष प्रथमा संवत् २०७५ ● दयानन्दाब्द १६४ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११६

अनावश्यक वस्तु का त्यागना ही अपरिग्रह कहलाता है

डॉ0 धीरज सिंह आर्य, सभा प्रधान

सार और असार अथवा आवश्यक और अनावश्यक वस्तु का विचार करके, सार और आवश्यक वस्तु एवं विचार की ग्रहण करना, तथा असार और अनावश्यक वस्तु व विचार को त्यागना, ''अपरिग्रह'' कहलाता है।

आधुनिक युग की तथाकथित सभ्यता का एक वीभत्य रूप आज हमारे सामने है। इसके अनुसार वस्तुओं और विचारों का संग्रह होता है और उनकी वृद्धि पर अधिक बल दिया जाता है। यहां तक होता है कि हानिकारक वस्तुओं और विचारों का भी संवर्धन और संग्रह किया जाता है। ऐसा सुख की प्राप्ति और वृद्धि के नाम पर ही होता है, परन्तु इसका परिणाम तो दुःख की प्राप्ति और वृद्धि के रूप में ही निकल रहा है। ऐसा क्यों होता है?

इसलिए कि जैसे अधिक खाने से अपच–रोग हो जाता है। उसी प्रकार अधिक और अनावश्यक विचारों तथा ऐश्वर्य के संग्रह से भी जीवन का सन्तुलन बिगड़ जाता है। इस बिगाड़ के कारण ही दुःख पैदा होते हैं। जब वस्तु–स्थिति यह है, तब सहज में ही यह समझा जा सकता है कि मनुष्य का कल्याण संग्रहशीलता में नहीं है, अपितु त्यागवाद ही अध्यात्मवादियों की भाषा में ''अपरिग्रह'' कहलाता है।

संग्रहशीलता एक प्रकार की बाल–लीला है। जैसे बच्चे रद्दी सामान को एकत्रित किया करते हैं, वैसे ही यह संग्रहशीलता भी है। इसके साथ ही यह संग्रहशीलता आत्म–विश्वास की एक प्रकार की कमी भी है। यह एक प्रकार की नास्तिकता भी है। इसके साथ ही यह प्रक्रिया आत्म अपमानजनक भी है। किसी कठिनाई की कल्पना करके ही तो उसके निवारण के लिए कुछ संग्रह किया जाता है। यह संग्रहशीलता तब चोरी और हिंस बन जाती है, जबकि संग्रही जब दूसरों के अधिकारों का अपहरण करते हैं और दूसरों को अभावग्रस्त होकर, उत्पीड़न का उपभोग करना पड़ता है।

कहना न होगा कि जब मनुष्य ईश्वर एवं उनकी व्यवस्था पर अविश्वास कर लेता है, चाहे वह इस बात को स्वीकार करे, या न करे, तभी तो वह संग्रहशील बनता है। जिस रोटी की आवश्यकता उसे कई साल के बाद होगी, उसे आज ही प्राप्त करके और जमीन में गाड़ कर, या बैंक में जमा करके, सुरक्षित करना और निश्चिन्त ही जाना, फिर कुछ भी न करना, चाहता है। उचित रूप में भावी कर्तव्यों का पालन न करना प्रमाद या उत्तम नियमों की अवहेलना करना, ये सभी नास्तिकों की बातें हैं। परन्तु आज तो जिसे भी देखो, वही पागलों की तरह धन संचय, वस्तु–संचय, में और अनावश्यक ज्ञान–संचय व तथाकथित विज्ञान–संचय में संलग्न हैं। यह नास्तिकता भी है, विकेकहीनता भी। यह सुस्पष्ट है कि यह संचय–वाद चारी और हिंसा का ही एक रूप है। परिग्रह कहो या संचयवादी एक ही बात है।

मनुष्य को उचित है कि थोड़े–थोड़े समय के पश्चात् अपने सम्पूर्ण वस्तु–भण्डार, धन–संग्रह, ऐश्वर्य और विचार संग्रह, आदि का विचार करे और देखे कि क्या अनावश्यक है? और क्या अधिक व व्यर्थ है? जो वस्तु अनावश्यक, अधिक व व्यर्थ हो, और जिसके बिना काम चल सकता हो, अथवा जो वस्तु उपयोग करने के पश्चात् अनावश्यक बन चुकी हो, ऐसी सभी वस्तुओं को ओर सभी विचारों को त्यागते रहना चाहिये।

ऐसा करने से एक तो जीवन का भार कम होगा, दूसरे अधिक सारवान् पदार्थों और विचारों के लिए भी स्थान बन जायेगा। इस प्रकार अभ्यास करते–करते मनुष्य के पास सत्य, शिव, सुन्दर और भद्र पदार्थों एवं विचारों का संग्रह निरन्तर बढ़ता ही चला जायेगा। ऐसा होने पर वह असत्य, अशिव, असुन्दर और अभद्र पदार्थों, और सम्पर्कों से भी बच जायेगा। यही तो योगियों को आत्म शोधन, मल–त्याग अथवा मल–नाश है। जीवन के चरम लक्ष्य अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करने का मार्ग है भी यही है।

प्रश्न होता है कि धन–संग्रह के लिए जो समय और शक्ति हमारे पास है, क्या उसे व्यर्थ ही गवा दिया जाये? यह प्रश्न बहुत भ्रामक है। उत्तर यह है कि गंवाये क्यों? यदि हमारा कोई आत्मिक और अभौतिक लक्ष्य है,

शेष पृष्ठ ७ पर

आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0 के तत्वावधान में

जिला आर्य प्रतिनिधि के संयोजन में स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी, आर्य समाज भग्गड्वा में स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी, श्री शिवनारायण आर्य, वानप्रस्थ आश्रम भग्गड्वा का भव्य उद्घाटन समारोह, १२-१३ मई २०१८ शनिवार-रविवार २०१८ को समारोह पूर्वक मनाया जा रहा है। आपकी उपस्थिति प्रार्थनीय है-

अध्यक्षता– वैदिक विद्वान् श्री वीरेन्द्र रत्नमू-मेरठ

मुख्य अतिथि– श्री डॉ० धीरज सिंह आर्य प्रधान आर्य प्रतिनिधि मण्डल, उ०प्र०

मुख्य वक्ता– श्री आयुक्त महोदय, देवी पाटन मण्डल

आचार्य नगेन्द्र जी आयोध्या, आचार्य सोमव्रत शास्त्री आचार्य विश्व्रत शास्त्री, श्रीमती गिरिजा त्रिपाठी, ओंकारनाथ शास्त्री सर्वजीत शास्त्री, श्रीमती शशी शर्मा पूर्व विधायक, हरीश शास्त्री लखनऊ आर्य भजनोंपदेशक के मधुर गीत सुनने का भी सौजन्य प्राप्त करें

कार्यक्रम

प्रातः 10 बजे से यज्ञ एवं उद्घाटन समारोह

निवेदक

कन्हैया लाल आर्य	जयप्रकाश पटवा	देवाशीष गुप्ता
प्रधान जिला सभा	प्रधान जिला सभा	प्रधान जिला सभा

शिवकुमार कौशल, रमेन्द्र देव आर्य, रमेश मिश्रा, संजय तिवारी, अनिल नैय्यर एवं क्षेत्रीय समस्त आर्य समाजें, संयोजक मण्डल

डॉ. धीरज सिंह
प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

सम्पादकीय.....

चीन में भारतीय बसंत की बहार

शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) के शिखर सम्मेलन के माध्यम से भारत से उच्च स्तरीय वार्ताएं न केवल भारत की बढ़ती शक्ति और राजनयिक दृढ़ता को मान्यता है, बल्कि दोनों देशों में इस परिपक्व भाव का भी द्योतक है कि 'चलना' तो साथ साथ है– या तो झगड़ते हुए चलो या सहयोग से बढ़ो। आठ सदस्य देशों वाला सहयोग संगठन मूलतः चीन, कजाकिस्तान, किर्गस्तान, रूस, तजाकिस्तान और उज्बेकिस्तान ने मिलकर बनाया था, सुरक्षा, सैन्य सहयोग और आतंकवाद विरोधी संयुक्त चिंताओं को एजेंडे में रखकर। गत वर्ष भारत और पाकिस्तान (चीन के समर्थन से भारत की स्थिति अपने लिए संतुलित करने) सदस्य बने और प्रधानमंत्री मोदी ने बयान दिया कि भारत–चीन संबंधों में मतभेद–विवाद में न बदलते हुए, ठीक से संभालें जाएं, तो अवसरों में बदल सकते हैं।

इस बीच, दलाई लामा तथा उनके कार्यक्रमों को लेकर कुछ परिवर्तन हुए, जो प्रकटतया भारत–चीन संबंधों को आहत होने से रोकने के लिए ही प्रतीत हुए। यद्यपि इससे परंपरागत दृष्टि से दलाई लामा के समर्थकों को विस्मय हुआ। अनेक सांस्कृतिक अकादमिक प्रतिनिधि मंण्डल चीन गए और १३ अप्रैल को भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल ने प्रधानमंत्री की २७ अप्रैल को होने वाली चीन यात्रा की तैयारी के लिए चीन के प्रमुख राजनयिक यांग जेयची से भेंट की, जो सीमा वार्ता के लिए अधिकृत प्रतिनिधि वांग यी से कहीं अधिक वरिष्ठ हैं। चीन में यही पद्धति है किसी वार्ता को बेहतर एवं सामान्य से अधिक महत्व देने की।

विदेश मंत्री सुषमा स्वराज और रक्षा मंत्री निर्मला सीतारमण शंघाई सहयोग संगठन के पृथक–पृथक संपन्न विदेश व रक्षा मंत्रियों के सम्मेलनों में आई और संगठन के लिए सभी पुरुष मंत्री–सदस्यों में वे दोनों अकेली महिलाएं थीं। यही तथ्य बढ़ते भारत और महिला नेतृत्व के उभार को दुनिया में दर्शाया गया। जहां भार के सिवाय अन्य सदस्य देशों ने चीन के वन बेल्ट, वन रोड, प्रस्ताव का समर्थन किया, वहीं तेज तर्रार दोनों मंत्रियों ने आतंकवाद के विरोध में भारत का रूख दृढ़ता से रखा।

सीमा पार से आतंकवाद, साइबर सुरक्षा और मादक द्रव्यों की तस्करी रोकने के लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता है। दोनों ने ही भारत की बढ़ती ताकत का जिक्र कर आतंकवाद को मूलभूत मानवाधिकार हनन की चुनौती बताया। कुल मिलाकर भारत के तीनों वरिष्ठ प्रतिनिधियों ने चीन में नरेंन्द्र मोदी की शी जिनपिंग से अनौपचारिक वार्ता के लिए वातावरण तथा आधारभूमि बना दी। मोदी इस अवसर का भारत की चिंताओं और विकास के लिए उपयोग करेंगे ही। पहली चिंता है, सीमा पर विवादों का समाधान। भारत यह स्पष्ट कर चुका है कि चीन के साथ भविष्य में सामान्य से बेहतर संबंध बनाने के लिए सीमा पर शांति पहली आवश्यकता है। डोकलम विवाद के दौरान नरेन्द्र मोदी की दृढ़ता और सेना की निर्भीक तैयारी ने विश्व में भारत की साख बढ़ाई, पर ऐसा विवाद दोबारा न हो। भारत के साथ व्यापार असंतुलन दूर हो। ये बातें जरूरी हैं, क्योंकि एशिया एवं पश्चिम एशिया में भारत को अपने नेतृत्व की धुरी मजबूत जमानी है। उत्तर कोरिया का प्रश्न चीन तथा अमेरिका में शक्ति स्पर्द्धा का विषय बना है। भारत इसे देख रहा है। मालदीव, श्रीलंका से लंकार बांग्लादेश, म्यांमार व आसियान में चीन सीधे–सीधे भारत के बढ़ते प्रभाव को रोकने का प्रयास कर रहा है।

– सम्पादक

गतांक से आगे .....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ षष्ठ समुल्लासारम्भः

अथ राजधर्मान् वक्ष्यामः

सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहरयेद् बलिम्। स्याच्चाम्नायपरो लोके वर्त्तेत पितृवन्नृषु।।१।।
अध्यक्षान्विविधान्कुर्यात् तत्र-तत्र विपश्चितः। तेऽस्य सर्वाण्यवेक्षेरन्नृणां कार्याणि कुर्वताम्।।२।।
आवृत्तानां गुरूकुलाद्विप्राणां पूजको भवेत्। नृपाणामक्षयो ह्येष निधिर्ब्राह्मो विधीयतें।।३।।
समोत्तमाधमै राजा त्वाहूतः पालयन् प्रजाः। न निवर्तेत संग्रामात् क्षात्रं धर्मम् अनुस्मरन्।।४।।
आहवेषु मिथोऽन्योन्यं जिघांसन्तो महीक्षितः। युध्यमानाः परं शक्त्या स्वर्गं यान्त्यपराङ्मुखाः।।५।।
न च हन्यात्स्थलारूढं न क्लीबं न कृताञ्जलिम्। न मुक्तकेशं नासीनं न तवास्मीति वादिनम्।।६।।
न सुप्तं न विसन्नाहं न नग्नं न निरायुधम्। नायुध्यमानं पश्यन्तं न परेण समागतम्।।७।।
नायुध्यव्यसनं प्राप्तं नार्त्तं नातिपरिक्षतम्। न भीतं न परावृत्तं सतां धर्ममनुस्मरन्।।८।।
यस्तु भीतः परावृत्तं सङ्ग्रामे हन्यते परैः। भर्त्तुर्यद् दुष्कृतं किञ्चित्तत्सर्वं प्रतिपद्यते।।९।।
यच्चास्य सुकृतं किञ्चिदमुत्रार्थमुपार्जितम्। भर्त्ता तत्सर्वमादर्त्त परावृत्तहतस्य तु।। १०।।
रथाश्वं हस्तिनं छत्रं धनं धान्यं पशून्स्त्रियः। सर्वद्रव्याणि कुप्यं च यो यज्जयति तस्य तत्।।११।।
राजश्व दद्युरुद्धारमित्येषा वैदिकी श्रुतिः। राजा च सर्वयोधेभ्यो दातव्यमपृथग्जितम्।।१२।। मनु०।।

प्रजा से वार्षिक कर आप्तपुरूषों के द्वारा ग्रहण करे और सभापतिरूप राजा आदि प्रधान पुरूष हैं वे सब तथा सभा वेदानुकूल होकर प्रजा के साथ पिता के समान वर्तें।।१।।

उस राज्यकार्य्य में विविध प्रकार के विद्वान् अध्यक्षों को सभा नियत करें, इन का यही काम है जितने-जितने जिस-जिस काम में राजपुरूष हों वे नियमानुसार वर्त्त कर यथावत् काम करते हैं वा नहीं, जो यथावत् करें तो उनका सत्कार और जो विरूद्ध करें तो उन को यथावत् दण्ड किया करें।।२।।

सदा जो राजाओं का वेद प्रचार रूप अक्षय कोष है उस के प्रचार के लिये जो कोई यथावत् ब्रह्मचर्य से वेदादि शास्त्रों को पढ़कर गुरूकुल से आवे उस का सत्कार राजा और सभा यथावत् करें तथा उन का भी जिन के पढ़ाये हुए विद्वान् होवें। इस बात के करने से राज्य में विद्या की उन्नति होकर अत्यन्त उन्नति होती हैं।।३।।

जब किसी प्रजा का पालन करने वाले राजा को कोई अपने से छोटा, तुल्य और उत्तम संग्राम में आह्वान करे तो क्षत्रियों के धर्म का स्मरण करके संग्राम में जाने से कभी निवृत्त न हो अर्थात् बड़ी चतुराई के साथ उनसे युद्ध करके संग्राम में जाने कभी निवृत्त न हो अर्थात् बड़ी चतुराई के साथ उनसे युद्ध करे जिस से अपना ही विजय हो।।४।।

जो संग्रामों में एक दूसरे को हनन करने की इच्छा करते हुए राजा लोग जितना अपना सामर्थ्य हो बिना डर पीठ न दिखा युद्ध करते हैं वे सुख को प्राप्त होते हैं इस से विमुख कभी न हो, किन्तु कभी-कभी शत्रु को जीतने के लिए उन के सामने से छिप जाना उचित है क्योंकि जिस प्रकार से शत्रु को जीत सके वैसे काम करे। जैसा सिंह में सामने आकर शस्त्राग्नि में शीघ्र भस्म हो जाता है वैसे मूर्खता से नष्ट भ्रष्ट न हो जावें।।५।।

युद्ध समय में न इधर-उधर खड़े, न नपुंसक, न हाथ जोड़ हुए, न जिस के शिर के बाल खुल गये हों, न बैठे हुए, न 'मै तेरे शरण हूं' ऐसे को।। ६।।

न सोते हुए, न मूर्छा को प्राप्त हुए, न नग्न हुए, न आयुध से रहित, न युद्ध करते हुओं को देखने वालों, न शत्रु के साथी।।७।।

न आयुध के प्रहार से पीड़ा को प्राप्त हुए, न दुःखी, न अत्यन्त घायल, न डरे हुए और न पलायन करते हुए पुरूष को, सत्पुरूषों के धर्म का स्मरण करते हुए, योद्धा लोग कभी मारें किन्तु उन को पकड़ के जो अच्छे हों बन्दीगृह में रख हुए, योद्धा लोग कभी मारें किन्तु उनको पकड़ के जो अच्छे हों बन्दीगृह में रख दें और भोजन आच्छादन यथावत् देवे और जो घायल हुए हों उन की औषधादि विधिपूर्वक करे। न उनको चिड़ावे न दुःव देवे। जो उन के योग्य काम हो करावे। विशेष इस पर ध्यान रक्खे कि स्त्री, बालक, वृद्ध और आतुर तथा शोकयुक्त पुरूषों पर शास्त्र कभी न चलावे। उनके लड़के-बालों को अपने सन्तानवत् पालें और स्त्रियों को भी पाले। उन को अपनी माँ बहिन और कन्या के समान समझे, कभी विषयासक्ति की दृष्टि से भी न देखें। जब राज्य अच्छे प्रकार जम जाय और जिन में पुनः-पुनः युद्ध करने की शंका न हो उन को सत्कारपूर्वक छोड़ कर अपने-अपने घर व देश को भेज देवे और जिन से भविष्यत् काल में विघ्न् होना सम्भव हो उन को सदा कारागार में रक्खे।।८।।

और जो पलायन अर्थात् भागे और डरा हुआ भृत्य शत्रुओं से मारा जाय वह उस स्वामी के अपराध को प्राप्त होकर दण्डनीय होवें।।९।।

और जो उस की प्रतिष्ठा है जिस से इस लोक और परलोग परलोक में सुख होने वाला था उस को उस का स्वामी ले लेता है, जो भागा हुआ मारा जाय उस को कुछ भी सुख नहीं होता, उस का पुण्यफल सब नष्ट हो जाता है और उस प्रतिष्ठा को वह प्राप्त हो जिस ने धर्म से यथावत् युद्ध किया हो।।१०।।

इस व्यवस्था को कभी न तोड़े कि जो-जो लड़ाई में जिस-जिस भृत्य वा अध्यक्ष न रथ घोड़े, हाथी, छत्र, धन-धान्य, गाय आदि पशु और स्त्रियां तथा अन्य प्रकार के सब द्रव्य और घी, तेल आदि के कुप्पे जीते हों वही उस-उस का ग्रहण करे।।११।।

परन्तु सेनास्थ जन भी उन जीते हुए पदार्थों में से सोलहवां भाग राजा को देवें और राजा भी सेनास्थ योद्धाओं को उस धन में से, जो सब ने मिल के जीता है, सोलहवां भाग देवे और जो कोई युद्ध में मर गया हो उसकी स्त्री और सन्तान को उस का भाग देवे और उस की स्त्री तथा असमर्थ लड़कों का यथावत् पालन करे। जब उसके लड़के समर्थ हो जायें तब उनको यथायोग्य अधिकार देवें। जो कोई अपने राज्य की रक्षा, वृद्धि, प्रतिष्ठा, विजय और आनन्दवृद्धि की इच्छा रखता हो वह इस मार्यादा का उल्लंघन कभी न करे।।१२।।

क्रमशः

धरोहर... आर्य समाज के मिशनरी उपदेशक–

श्री रामस्वरूप आजाद जी

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा
उ०प्र०, लखनऊ
संचालक–गुरूकुल पूठ, हापुड़
मो० ६८३७४०२१६२

आर्य समाज के उपदेशक का पुरूषार्थ उनकी तपस्या उनका समर्पण, उनकी आस्था और विश्वास जो आर्य समाज रूपी पौधे को विशाल वट वृक्ष बना दिया आज जिसकी छाया में बैठे आर्य नेता, अधिकारी फल–फूल रहे हैं अपने स्वार्थों में आर्य समाज की जड़ें खोखली और कमजोर कर रहे हैं उन जड़ों को सींच के लिए उपदेशकों का पसीना और खून और जीवन खाद के रूप में लगा है उसे समर्पण का पानी देकर बढ़ाया है अब तो उसे मात्र सुरक्षित रखना है और उसकी छाया में बैठकर उसके फल खाने हैं हम इतना भी नहीं कर पा रहे हैं कितनी हमारी अवनति हो गई है यह एक विडम्बना ही कही जायेगी।

ऐसे ही समर्पित उपदेशक कार्यकर्ता योद्धा, सेनानी, के रूप में आजाद के नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त हुए जिन्हें राम स्वरूप आर्य के नाम से ही जानते हैं। एक दिन मुझे उनके दर्शन करने का सौभाग्य हुआ नाम तो सुना था पर दर्शन नहीं हुए थे मिलने पर सुखद आश्चर्य हुआ मैंने पूछा आप आजाद क्यों लिखते हैं तब थोड़ी देर तक भावुक होकर कहीं खो गए और मेरी ओर देख कर बोले समय आने पर पता चल जायेगा। मत पूछो यही ठीक है। म० वेगराज आर्य भूड़िया वाले उनका सम्मान गुरूजी की तरह करते थे उनके ग्राम में २ दिन सम्मेलन था। वहां प्रथमवार उन्हें सुनने का अवसर मिला फिर आप गुरूकुल भी आये स्वामी शान्तानन्द जी ने विजनौर जिले के नारायण खेड़ी ग्राम में वेद पारायण यज्ञ का आयोजन कराया था। मुझे ब्रह्मा बनाया गया। म० नारायण स्वामी क्रान्तिकारी एवं म० रामस्वरूप आजाद जी भी वहां आये थे। आपने सुन्दर भजन सुनाये आप वीर रस के कवि और प्रचारक रहे हैं। उस क्षेत्र में पहलवानी का शोक है प्रत्येक ग्राम में युवकों और बच्चों को शौक से पालकर बलवान बनाते रहे हैं।

सरपंच टीकम सिंह जी मुख्य संयोजक थे बोले महाशय जी आज रात को इतिहास हो जाये तब उन्होंने महाभारत के कुछ अंश सुनाते हुए चक्रव्यूह के रचने पर गुरू द्रोणाचार्य की चाल को वीर किशोर अभिमन्यु ने कैसे समाप्त किया अपने पिता आर्जुन द्वारा चक्रव्यूह भेदन की घटना को संगीत के माध्यम से प्रस्तुत किया। इसमें करूण एवं वीर दोनों ही रस विद्यमान हैं। अपनी दादी कुन्ती से अभिमन्यु अशीर्वाद लेने जाता है उस समय दादी जी का उपदेश वर्णित किया था–

शेरों के शेर नरेश बेटे, सुन मेरा उपदेश बेटे।
तेरी मौसी के केश बेटे, खिचे सभा के बीच में।।
जा सुत बदला लेकर आना,
युद्ध में मत न पीठ दिखाना।
बाना कर ले लाल रंग का।
रखते रहना ख्याल जंग का।।
आग लगा दल बीच में,
मत करना कोई क्लेश बेटे।।
शेरों के शेर बेटे–सुन मेरा, उपदेश बेटे।।

जब यह पंक्ति गा रहे थे तब दोनों हाथों से हारमोनियम बाजा भी उठा लिया था, चेहरे पर जोश, वाणी में रोश था और लग रहा था कि आजाद जी स्वयं ही जंग में जा रहे हैं लोगों में अपूर्व उत्साह आया तालियां बजी और अभिमन्यु की जय–जय कार लोग करने लगे।

ऐसा प्रचार करते थे आपके कई शिष्य साथ रहते थे जिसमें छोटे सिंह, प्रहलाद सिंह मुख्य हैं वैसे श्री ज्ञानेन्द्र सिंह मोहन लाल आर्य, श्री सुरेन्द्र सिंह आजाद, म० मुख्यतार सिंह जी म० हरचरन सिंह, जगदेव हठीला आदि–आदि आपके शिष्य रहे हैं। आपकी एक बड़ी विशेषता थी कि सभी शिष्यों को घर पर रखकर भोजन खिलाना फिर सिखाना और उन्हें प्रचारार्थ साथ ले जाना उनका खर्चा करना फिर घर के लिए दक्षिणा देना यह परिवार वालों से ऊपर उठकर समाज सेवा करते थे।

स्वाभिमानी इतने थे कि उन दिनों छूआछात के समय आदि कोई आत्मीय सम्बन्धी यह कह दे कि तुम इन शिष्यों को साथ लिए फिरते रहते हो कुछ घर का कार्य भी देख लिया करो तभी उठकर चल देते थे प्रार्थना करने पर भी नहीं रूकते थे। बिजनौर मेरे व्यायाम प्रदर्शन को देखकर मुझे अपने ग्राम का निमन्त्रण दिया वहां भी विशाल कार्यक्रम था स्वामी भीष्म जी, म० बेगराज जी, जैसे–जैसे उपदेशक तथा मन्त्री उ०प्र० सरकार भी थे क्षेत्र की भारी भीड़ आई थी। मेरा व्यायाम प्रदर्शन एवं भाषण भी कराया था आज भी उस समय के लोग मुझे याद करते हैं ऐसा मोहन लाला आर्य उड़ीसा में बता रहे थे यह वर्ष १९८० के आस–पास की घटना है ६ दिसम्बर को आपकी पुण्य तिथि है उस पर प्रतिवर्ष उत्सव होता है प्रतिवर्ष बुलाते हैं, पर प्रभु कृपा नहीं होती एक बार जाने का मन है उस समय के कितने लोग हैं। जो मुझे अभी जानते हैं।

आपका ग्राम फिरोजपुर खुर्जा जेबर रोड़ पर जहांगीपुर के पूर्व दक्षिण दिशा में स्थित है सभी किसान उत्साही एवं धार्मिक है आपके यहां कार्यक्रम होने से भूतगढ़ी ग्राम में भी मेरा प्रदर्शन हुआ यह सब आशीवार्द भी आजाद जी का ही रहा जहां वे जाते तो युवकों को प्रेरणा देने के समझते थे कि यदि आचार्य जी का प्रदर्शन हो गया तो मेरा प्रचार और प्रभाव प्रभावशाली रहेगा ऐसा आपका प्रयास था आपने ग्राम–ग्राम में जाकर प्रचार किया ब्रजक्षेत्र में आपका यशोगान सभी आर्य जन करते हैं। आप मिशनरी भाव रखते थे। आपने अपने बाद आज तक उस परम्परा का निर्वहण कर रहे हैं। यह सबसे बड़ी बात है। आप द्वारा ब्रजक्षेत्र में जो आर्य समाजों की स्थापना करना पूर्व स्थापित को सक्रिय करना यह बड़ी बात थी उससे वे सफल हुए। आपने पाखण्ड के खिलाफ बहुत लिखा है और प्रचार भी किया है ग्राम में कहीं यदि कोई साधु पाखण्डी होता था तब आप अपने प्रचार में उसका खुलकर विरोध करते थे मुझे बिजलीपुर खेड़ा, निवासी म० मुख्त्यार सिंह आर्य भजनोपदेशक के भतीजे गम्भीर सिंह आर्य ने बताया कि हमारे ग्राम के निकट नहर किनारे एक आश्रम है, पूरे क्षेत्र में उनकी बड़ी प्रसिद्धि और प्रशंसा है श्रद्धा विश्वास है वर्ष में मेला भी लगता है, एक संस्कृत विद्यालय भी चलता है। उसके महन्त बाबा मुनि जी महाराज मोटे प्रभावी साधु संचालन करते हैं, एक दिन आजाद जी उधर गए तथा बातचीत में क्रोधित होकर महात्मा से बोले तेरे पेट में चिमटा घुमाकर सारी आतें और माल जो खा रक्खा है अभी बाहर निकाल दूंगा। इसे सुनकर उनकी शिष्य मण्डली क्रोधित होकर आजद जी पर हमला करने का प्रयास करने लगे महाराज जी ने अपने शिष्यों से कहा कि तुम अगर इनका अपमान करोगे तो इसका दुष्परिणाम अच्छा नहीं रहेगा ये आर्य समाज के उपदेशक हैं प्रत्येक ग्राम में इनके शिष्य सामान्य नहीं पहलवान् हैं। अतः मुझे जो कह रहे हैं ठीक हैं ये समाज सुधारक है पूज्य हैं नमन योग्य हैं आप इन्हें नमस्कार कर क्षमा याचना करो फिर शिष्यों ने वैसा ही किया ऐसे थे श्री आजाद जी वे वैदिक संस्कृति और आर्य समाज की धरोहर हैं उसकी हमे रक्षा करनी चाहिए।

आज उनका स्मरण करके उनके प्रति श्रद्धा के भाव जागृत होते हैं कि उन्होंने विषम परिस्थितियों में भी वेद प्रचार किया। आज हम सुविधाओं से युक्त होकर भी उतना नहीं कर रहे हैं आर्य समाज यदि आगे बढ़ा है उसमें आर्य भजनोपदेशकों का अपूर्व योगदान है। जिला सभा के अधिकारी, वेद प्रचार अधिष्ठाता ऐसे महानुभावों के घर पर जाकर उनके परिवार के प्रति आत्मीयता के भावों से उनकी कुशलता लेते रहेगें तो कड़ी जुड़ी रहेगी अन्यथा परम्परायें समाप्त हो जायेगी।

आज हम उनको सादर नमन करते हुए आर्य समाज को अधिकारियों से निवेदन करूंगा, इस विषय में विशेषांक ध्यान देकर गौरव शाली परम्परा की सुरक्षा करेगें।

वैदिक राज्यव्यवस्था की उपेक्षा करके

अतीत से वर्तमान संवरता है और वर्तमान से भविष्य बनता है। आताद भारत का संविधान और व्यवस्थातंत्र बनाते समय हमने अपने वैदिक अतीत की उपेक्षा की और आयातित चिन्तन को आधार बनाया। राजनैतिक व्यवस्था के कुछ बिन्दुओं पर विवेचन करने पर यह निष्कर्ष सामने आया है कि हम न तो 'हम' ही रह सके और न 'वो' बन सके। हमारे वैयक्तिक और राष्ट्रीय चरित्र का निरन्तर पतन हुआ है और व्यावहारिक जटिलताएं बढ़ी हैं।

लोकतन्त्र लाभकारी और लुभावना है, इसमें कोई सन्देह नहीं, किन्तु लोकतन्त्र में रह गयी त्रुटियों ने लोकतन्त्र की महिमा को खण्डित कर दिया है। देश को संचालित करने का और उन्नत करने का दायित्व जिस वर्ग पर है उन राजनैतिक प्रतिनिधियों पर बौद्धिक योग्यता, मर्यादित चरित्र और यथायोग्य दण्ड के नियम और प्रतिबन्ध शिथिल एवं असफल हैं। वैदिक राजव्यवस्था में प्रत्येक वर्ग के लिए उक्त नियमों के यथायोग्य प्रावधान थे। बौद्धिक योग्यता का अर्जन, मर्यादित नियमों अर्थात् धर्म का पालन तथा न्याय का आचरण अनिवार्य प्रतिमान थे। वैदिक नीतिशास्त्रों में इस बात को बार–बार बल देकर कहा गया है– ''यथा राजा तथा प्रजा'', ''यद् राजा करोति तद् विट् करोति'' (मैत्रायणी संहिता १.१०.१३), दोनों का एक ही भाव है– 'जो राजा करता है, वही प्रजा करती है, जैसा राजा होता है वैसी प्रजा होती है, और होती रहेगी।

वर्तमान प्रगतिवादी और सर्वश्रेष्ठ कही वाली आयातित लोकतान्त्रिक राज्यव्यवस्था में बौद्धिक योग्यता की विसंगतियों की चर्चा करते हैं। वह अंगूठाछाप भी हो सकता है। मर्यादित होना जरूरी नहीं, हां, व्यसनी हो सकता है। विद्वान् होने की शर्त लगाना लोकतान्त्रिक मूल्यों में हस्तक्षेप हो जाता है और व्यसनी न होने की शर्त लगाना 'प्राइवेट लाइफ' में। वर्ममान शिक्षितों और चिन्तकों के कितने अद्‌भुत तर्क हैं और कितनी विलक्षण व्यवस्था है। कैसी विड़म्बना है कि वर्तमान राज्यव्यवस्था में यदि किसी को चपरासी होना है तो उसे आठवीं या दसवीं पास अवश्य होना चाहिए, और यदि राजा, राजनेता, मन्त्री, विधायक या सांसद होना है तो पहली पास करना भी आवश्यक नहीं। देश का प्रधानमंत्री, प्रदेशों का मुख्यमन्त्री, अंगूठाछाप चल सकात है, चपरासी नहीं। यदि आपको स्कूटर, कार चलाने हैं तो आपको अपनी उस विषयक योग्यता की परीक्षा देकर पहले एक प्रमाण पत्र (लाइसेंस) प्राप्त करना होगा किन्तु एक विशाल देश या प्रदेश को चलाने वालों को किसी योग्यता–प्रमाण पत्र की आवश्यकता नहीं। आज का प्रशासन और न्यायालय एक आम अनपढ़ नागरिक से भी यह अपेक्षा करता है कि उसे प्रत्येक कानून की जानकारी होनी चाहिए किन्तु कानून बनाने वाले राजनैतिक से यह अपेक्षा बिल्कुल नहीं कि जाती कि वह जो कानून बना रहा है उसकी उसको जानकारी है या नहीं। आज के राजनैतिकों को यह पूरी छूट है कि वे निरक्षर, अयोग्य होते हुए भी देश को चलाने वाले कानून बना सकते हैं। यह बात अलग है कि वे उनके नाम से बनाये हुए लिखे कानूनों को पढ़ भी नहीं पाते। क्या ऐसी राज्यव्यवस्था को न्यायोचित, तर्कसंगत, जनहितकारी और राष्ट्रीयहितकारी माना जा सकता है? यदि देश का राज्य और राजनीति बिना इनके चल सकती है, तो अन्य क्षेत्र भी चल सकते हैं। यदि अन्य क्षेत्र इनके बिना नहीं चल सकते हैं तो देश संचालन और विधि निर्माण जैसा कार्य बिना विद्वता और योग्यता के कैसे चल सकता है? इन विसंगतियों पर टिकी कोई शासन–पद्धति चिरायु नहीं हो सकती।

अयोग्य, अशिक्षित और जनधिकारी शासक के नेतृत्व में कोई भी समाज या राष्ट्र प्रसन्नतामय वातावरण में रहकर बौद्धिक उन्नति नहीं कर सकता और न न्याय प्राप्त कर सकता है। वहां निराशा, हताशा और आपाधापी का वातावरण उभरता जायेगा। बौद्धिक प्रतिभा को प्रतिष्ठा, महत्व और उपयुक्त स्थान न मिलने से बौद्धिक उन्नति अवरूद्ध होती जायेगी। यह हम भारत में ही पौराणिक काल में भुगत चुके हैं। वैदिक राजनीतिज्ञों का तो इस विषय में स्पष्ट मत है–

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानां च व्यतिक्रमः।
त्रीणि तत्र प्रवर्तन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम्।।

'जिस राष्ट्र में अपूज्यों–अयोग्यों का सम्मान और पूज्योंयोग्यों की उपेक्षा होती है वहां अन्याय के कारण तीन प्रकार की आपत्तियां उपस्थिति हो जाती हैं– १. दुर्भिक्ष–खाद्य एवं भोग्य पदार्थों में अव्यवस्था या काला बाजारी, २. मरणम्–अराजकता, अपराध, मारकाट, ३. भयम्–जनता का भय के वातावरण से त्रस्त रहकर विनष्ट होना। ऐसे वातावरण में यदि धन, बल और बुद्धि में किसी भी प्रकार की समृद्धि हो भी जायेगी, तो वह चिरस्थायी नहीं रह सकती। अराजकता उसको निगल जायेगी। उस अराजकता के तीन नाम हैं–अभाव, अराजकता और विनाश। इसलिए वैदिक राज्यव्यवस्था में राजा और राजनेताओं के लिए कुछ अनिवार्य नियम बनाये गये थे जिनमें पूर्णशिक्षित और धार्मिक होना परमावश्यक थे।

वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था ने धर्म को पूजा–पाठ मानकर तिरस्कृत करके स्वयं अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारी है। वैदिक मनीषियों का स्पष्ट मत है कि अविद्वान् और अधार्मिक शासक कभी राष्ट्र को श्रेष्ठ मार्ग पर नहीं ले जा सकता। उसके शासन में सुख और शान्ति का वातावरण नहीं बन सकता। इसलिए वैदिक राज्यव्यवस्था में विद्या के साथ धर्म को प्रत्येक कार्यकलाप का मूलधार और कसौटी माना गया है। पहले यह स्पष्ट कर दूँ कि धर्म का अर्थ केवल पूजा–पाठ नहीं है, इसका अर्थ 'नैतिक–मर्यादित आचरण' और ईश्वरविश्वास' है। धर्म वह तत्व है जो जीवन में धारण करने योग्य है, और जिससे व्यक्ति, समाज और राष्ट्र का कल्याण होता है। धर्म वह तत्व है जिसे मानवीय कर्तव्यों से पृथक नहीं किया जा सकता। इसलिए वैदिक व्यवस्था में धर्म का एक नाम मानवता है। राजा और राजनीतिज्ञ क्योंकि जनता के नेता होते हैं, देश के कर्णधार होते है, अतः उनमें धर्म की प्रधानता अपेक्षित है। धर्मपालन में दोहरे मानदण्ड नहीं होते। वहां निजी जीवन में भी शुचिता आवश्यक हो जाती है और सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में भी।

वर्तमान व्यवस्था राजनैतिकों तथा अन्य नागरिकों को दोहरा जीवन जीने की छूट देती है। उनकी 'सोशल लाइफ' कुछ और, तो 'प्राइवेट लाइफ' कुछ और होती है। नयी व्यवस्था को भ्रान्ति है कि सोशल और ऑफिशियल लाइफ' यदि ठीक है तो उस पर 'प्राइवेट लाइफ' का कुछ फर्क नहीं पड़ता। किन्तु हव भूल जाती है कि व्यक्ति विचारों और संस्कारों से ही संचालित होता है। वह 'प्राइवेट लाइफ' एक दिन सामाजिक और कार्यालयीन जीवनपद्धति पर प्रभावी हो जायेगी। और तब दोनों मिलकर एक हो जायेंगी। निजी जीवन में आदर्शों और मर्यादाओं का पालन न करने वाले किसी व्यक्ति से यह आशा कैसे की जा सकती है कि वह सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में आदर्शवान् होगा? उसको देखकर जनता में भी आदर्श मूल्यों की आशा नहीं की जा सकती। यही कारण है कि आज के परिवेश में, आदर्श, नैतिक मूल्य, मर्यादाएं, न्याय विलुप्त होते जा रहे हैं, और अधर्म, अपराध पापाचार, भ्रष्टाचार, अन्याय बढ़ते जा रहे हैं। धार्मिकता अथवा नैतिकता के अभाव में भ्रष्टाचार रग–रग में समा रहा है। वह शिष्टाचार और अपराधियों का राजनीतिकरण होता जा रहा है। ऐसे लोग घृणास्पद के स्थान पर महिमामण्डित और प्रभावमण्डित हो रहे हैं। ऐसे लोगों का गली, गांव शहर, समाज में वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। आम जनता में आतंक व्याप्त है। जो जितना बड़ा भ्रष्टाचारी, आतंकी, अपराधी है, उसका चुनाव जीतने की उतनी ही अधिक गारंटी है। गैर–अपराधी दर–दर घूमकर वोट मांगने पर भी जीतें या न जीतें, किन्तु महा अपराधी जेल में ऐश करते हुए ही चुनाव जीत जाते हैं। यद्यपित चुनाव आयोग द्वारा कुछ अंकुश लगाते हुए यह अनिवार्य कर दिया गया है कि प्रत्येक प्रत्याशी सम्पत्ति की घोषणा के साथ अपराधों/मुकदमों का विवरण भी प्रस्तुत करेगा, किन्तु अधिकाधिक आपराधिक मुकदमें तो मानों उनकी 'मैरिट लिस्ट' बन गये हैं। आज का समाज कितना असहाय और विवश है कि उसे क्रूरकर्मा आतंकवादियों को 'अतिवादी' जैसे दार्शनिकनुमा और महा अपराधियों को 'बाहुबली' जैसे मनोहर विशेषणों से पुकारना पड़ रहा है।

धनबली, पदबली और बाहुबली लोकतन्त्र को दोनों हाथों से लूट रहे हैं। लोकतन्त्र क्या है, उनका अभयारण्य बना हुआ है और वे उसमें स्वच्छन्दता से विचरते हैं। गांव से लेकर देश को चलाने वाले लोकसभा तक उनका दबदबा है। प्रशासन, नियम, कानून उनके ठेंगे पर रहते हैं। लोकतन्त्र का असली 'लोक' दीन–हीन, असहाय है। नाम लोकतन्त्र का है किन्तु वस्तुतः उसकी बागडोर 'बलीतन्त्र' के हाथों में खेलती है। इसलिए आज लोकतन्त्र पर ही प्रश्नचिन्ह लगने लगता है। ऐसे कुपोषित लोकतन्त्र से लम्बे जीवन की आशा कैसे की जा सकती है?

कुछ लोग कहते हैं कि संस्कारों की, आदर्शों की, मर्यादाओं की कोई आवश्यकता नहीं हैं, क्योंकि हमारा संविधान है, कानून है। उसके अनुसार लोग चलेंगे, व्यवस्थातन्त्र चलेगा, देश चलेगा, जो नहीं चलेगा वह दण्डित होगा। हम भूल जाते हैं कि 'कानून' तो एक जड़ तत्व है। संस्कारों, आदर्शों, मर्यादाओं के बिना वह निष्क्रिय है, असहाय है। संस्कारों और दृढ़ संकल्पों से ही उसमें चेतना आती है। जनचेतना के बिना कानून व्यर्थ है। धनबल, बाहुबल और पदबल के सामने वह 'बेचारा' है। केवल कानूनी व्यक्ति भी 'रोबोट मानव' के समान है जब तक कि उसमें संस्कारों और संकल्पों का स्फुरण न हो। हमने संसकारों और संकल्पों को, जो वैदिक व्यवस्था में धर्म के अन्तर्गत समाहित थे, निरर्थक मान लिया है, यह नैतिक पतन का कारण है।

आइए, अब तुलना करते हैं लोकतन्त्र के शासक कैसा होना चाहिए और उसे किन व्रतों अर्थात् कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए, इसका सुन्दर चित्रण और चित्र वैदिक राज्यव्यवस्था में देखा जा सकता है। मनुस्मृति में एक सारगर्भित श्लोक आता है–

इन्द्रस्यार्कस्य वायोश्च यमस्य वरुणस्य च।
चन्द्रस्याग्नेः पृथिव्याश्च तेजावत्तं नृपश्चरेत्।।

मनुस्मृति १.३०३

'राजा या शासक को इन्द्र, अर्क–सूर्य, वायु, यम, वरुण, चन्द्र, अग्नि और पृथिवी के स्वाभाविक कार्यों को कर्त्तव्यरूप में पालन करने का व्रत लेना चाहिए।' वे व्रत हैं १. इन्द्रव्रत– जिस प्रकार वर्षा का देवता (शक्ति) इन्द्र वर्षाकाल में भरपूर वर्षा करके धन–धान्य से सम्पन्न करता है, उसी प्रकार राजा, प्रजाओं की कामनाओं को पूर्ण करके उन्हें प्रसन्न रखे, यह राजा का इन्द्रव्रत है। जिस प्रकार सूर्य बिना कष्ट पहुंचाए रस ग्रहण करता है, उसी प्रकार राजा–प्रजाओं से थोड़ा–थोड़ा कर ग्रहण करे। ३. वायुव्रत– जिस प्रकार वायु प्राणियों में प्रविष्ट होकर सर्वत्र विचरण करता है, उसी प्रकार राजा दूतों के द्वारा प्रजाओं के सब दुःखों–सुखों को जाने। ४.यमव्रत–जिस प्रकार मृत्यु समय आने पर सबको वश में करती है, उसी प्रकार अपने–पराये के पक्षपातरहित होकर न्याय करे और अपराधियों को अवश्य दण्डित करे। ५. वरूणव्रत–जिस प्रकार जल अपनी तरंगों या भंवर से किसी को जकड़ लेता है, उसी प्रकार राजा अपराधियों और लोककण्टकों को कारावास या वश में रखे। ६. चन्द्रव्रत–जैसे चन्द्र के माधुर्य को देखकर लोग प्रसन्न होती हैं, उसी प्रकार राजा ऐसा हो कि प्रजाएं उसको देखकर हर्ष का अनुभव करें। ७. अग्निव्रत–जिस प्राकर अग्नि अपवित्र वस्तुओं को भस्म कर देती हे, उसी प्रकार राजा पापकर्मों और दुष्टों को भस्म कर देती है, उसी प्रकार राजा पापकर्मों और दुष्टों को भस्म करने वाला हो। ८. धराव्रत–जिस प्रकार धरती प्राणियों को समान भाव से धारण करे समता से पालन करती है, उसी प्रकार राजा समानतापूर्ण व्यवहार रखते हुए प्रजा का पालन–पोषण करे। यह राजा की संक्षिप्त एवं आदर्श आचार संहिता थी।

आधुनिकमन्य लोग वर्तमान राज्यव्यवस्था में प्रचारित 'समाजवाद', समतावाद' आदि विचारधारा को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं जिसे वह वर्तमान राजनीति की अभूतपूर्व खोज हो, या अद्‌भुत विशेषता हो। पाठकों को जानना चाहिए कि वैदिक राज्यव्यवस्था में प्रजारंजन, प्रजाहित, प्राजारक्षण, प्राजापालन ही राजा का प्रमुख कर्तव्य था और समता का व्यवहार उसका आदर्श था। राजा के कर्तव्यों में 'धराव्रत' समाता के व्यवहार का ही कर्तव्य है। इसके अतिरिक्त, राज्याभिषेक के समय राजा

हमने क्या खोया, क्या पाया?

– डॉ0 सुरेन्द्र कुमार

सार्वजनिक रूप से समाज हित अर्थात् प्रजा हित की और समानता के व्यवहार की प्रतिज्ञाएं भी करता था। वैदिक काल में राजा बनने के लिए राजसूय यज्ञ और सम्राट् अर्थात् चक्रवर्ती राजा बनने के लिए अश्वमेध यज्ञ करना पड़ता था। उस चक्रवर्ती सम्राट को भी ये प्रतिज्ञाएं करनी होती थीं। वैदिकाल के विख्यात चक्रवर्ती सम्राट पृथु के वृतान्त में उपर्युक्त नियम का उल्लेख मिलता है। महाभारत (शान्ति, ४६, ६८–१२८) में आता है कि सम्राट् बनते समय अश्वमेध यज्ञ के अन्तर्गत ऋत्विज् ऋषियों ने सम्राट् पृथु से निम्नलिखित प्रतिज्ञाएं करायी थीं–

१. मैं मनसा–वाचा–कर्मणा सत्यप्रतिज्ञा करता हूं कि निर्धारित होकर पालन करूंगा।

२. प्रिय–अप्रिय की भावना को छोड़कर सभी प्रजाजनों के साथ समानता का व्यवहार करूंगा।

३. जो कोई अपने धर्मों–कर्तव्यों से विचलित होगा उसको काम, क्रोध, लोभ, मान–अहंकार की भावना को दूर रखकर, स्वीकृत धर्म (संविधान) के अनुसार दण्ड दूंगा।

४. प्रजा जन को 'भौम–ब्रह्म' मानकर उसका पालन–रक्षण करूंगा अर्थात् जिस प्रकार व्यक्ति ईश्वर के प्रति श्रद्धा, सम्मान, प्रेम भाव रखता है उसी प्रकार प्रजा को आदर, प्रेम दूंगा और उसका पालन करूंगा।

ध्यान दीजिए, वैदिक राजा के लिए प्रजा केवल 'पुत्रवत्' ही नहीं, 'ब्रह्मवत' आदरणीय भी होती थी। इससे उदात्त आदर्श और कर्तव्य आज तक किसी भी राजनीति में स्थापित नहीं हुए हैं। आज का तन्त्र आन्तरिक आदर्शों की चर्चा नहीं करता क्योंकि उन आदर्शों को निभाना 'लोहे के चने चबाना' है। वैदिक राजा इन कठोर आदर्शों का पालन करते थे। उनके लिए राजगद्दी ठाठ–बाट का साधन और पीढ़ियों के लिए धनसंचय का माध्यम नहीं थी। उनका राजगद्दी के प्रति नहीं, कर्तव्य के प्रति प्रेम था। वे तानाशाह या लालफीताशाह की तरह मनमाना शासन नहीं करते थे अपितु प्रजा का पुत्रवत् पालन करते थे। अधिकांश राजा, होने के साथ ऋषि थे और ऋषितुल्य तपस्वी, निर्लिप्त, अध्ययनपरायण और आध्यात्मिक जीवन जीते थे। इसी कारण उन्हें 'राजर्षि' कहा जाता था। आज की तरह जर्जरशरीर होकर भी कुर्सी से चिपके रहकर मरना उनका लक्ष्य नहीं होता था, वानप्रस्थक काल आते ही पुत्र को राज्य सौंप राजा–रानी वन में चले जाते थे और तपस्या एवं साधनामाय जीवन बितातै थे। प्रजावत्सल और मर्यादापुरूषोत्तम राम प्रजा के हितसाधन में तत्पर रहते थे। इसी कारण इतिहास में उनके आदर्श राज्य को 'रामराज्य' के रूप में स्मरण किया जाता है। केकयराज अश्वपति ब्रह्मविद्या के विशेषज्ञ थे। छान्दोग्य उपनिषद् में आया है कि प्राचीनशाल, सत्ययज्ञ, इन्द्रद्युम्र, जन और वुडिल नामक पांच ब्रह्मजिज्ञासु समृद्ध गृहस्थ उनके पास ब्रह्मविद्या पर विचार–विमर्श करने जाते हैं। सम्राट अश्वपति उनके रात्रि निवास और भोजन ग्रहण करने का अनुरोध करता है। वे इन बातों में इसलिए रूचि नहीं लेते कि भूल से राजा द्वारा अन्याय, अधर्म हो जाता है। ऐसे राजा का अन्न भी पापकारक होता है। उनके मनोभावों को भांपकर राजा अश्वपित गौरव के साथ घोषणा करता है कि मेरा अन्न खाने में कोई दोष नहीं है, क्योंकि–

न में स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहितागिर्न्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः।।

(छान्दो.५.११.५)

'हे ब्रह्मवेत्ताओं! मेरे राज्य में कोई चोर–डाकू नहीं है, न कोई अदानी है, शराबी है, न कोई यज्ञानुष्ठान से रहित हैं मेरे राज्य में काई परस्त्रीगामी पुरूष नहीं है, फिर परपुरूषगामी स्त्री कैसे होगी? इसलिए आप निःशंक होकर भोजन ग्रहण कीजिए। मध्यकाल में सम्राट अशोक भी एक उदाहरण पुरूष हुए हैं। वे अपने जीवन के उत्तरवर्ती काल में राजा होते हुए भी एक भिक्षु का जीवन जीते थे। राज्य के सुख–ऐश्वर्य का उपभोग नहीं करते थे। वेशपरिवर्तन करके प्रजा में स्वयं घूम–घूमकर उनके दुःखों असुविधाओं की जानकारी लेकर उन्हें दूर करते थे।

आज के लोग इन आदर्शों पर विश्वास नहीं कर पाते। वे इन्हें अतिशयोक्ति और गर्वोक्ति कहकर इनकी सत्यता को झुठलाना चाहते हैं। हमारे संस्कार इतने संकीर्ण, स्वार्थमय, तामसिक और राजसिक हो चुके हैं कि हमें वे उदात्त आदर्श, संभव नहीं लगते। जैसे किसी विलासिता में आकण्ठ डूबे व्यक्ति को ब्रह्मचर्य जीवन जीना, मद्यपायी को मद्यरहित जीवन जीना, भ्रष्टाचारी को रिश्वतरहित रहना, स्वेच्छाचारी को पतिव्रत और पत्नीव्रत निभाना संभव नहीं लगते, उसी प्रकार आज के उदात्त मूल्यों से रहित परिवेश में जीने वालों को प्राचीन आदर्श संभव नहीं लगते। यही कारण है कि आज विश्व का कोई शासक सम्राट अश्वपति जैसी महती घोषणा नहीं कर सकता। कोई राजनीतिज्ञ राम के 'प्राण जाए पर वचन न जाए' के आदर्श को सोच भी नहीं सकता। किन्तु, कुछ महान् आत्माएं अर्वाचीन युग में भी भारत में पैदा होती हैं जिन्होंने यहां की आदर्श– परम्परा को जीवित रखा और सीाव सिद्ध किया है। वीर शिरोमणि छत्रपति शिवाजी के समक्ष जब सुन्दरी मुस्लिम वधू को महल में रखने के लिए लाया गया तो उन्होंने उसको भोग्या के रूप में नहीं, माता के रूप में देखा और आदेश दिया कि इसे सम्मानपूर्वक इसके घर पहुंचा दिया जाए। दूसरी ओर उसी काल में मुसलमान बादशाह चुन–चुन कर हिन्दू सुन्दरियों को बलात् महलों में रखते थे और उनकी इज्जत लूटते थे। हीन संस्कारी लोगों को कभी आर्य आदर्श संभव कैसे लग सकते हैं? उनके लिए तो उदात्त संस्कार, उदात्त वैदिक संस्कृति– सभ्यता की विशेषता थी। और राजा से उसी उदात्त आचरण की अपेक्षा की जाती थी।

वैदिक राज्यव्यवस्था में प्रजातन्त्र शासन भी था (जैसे अम्बष्ठ गणतन्त्र), किन्तु अधिकार तन्त्र नहीं था, वह लोकतन्त्र और राजतन्त्र का मध्यमार्गी रूप था। राजा के पुत्र का जब युवराज अथवा राजा के पद पर अभिषेक होना होता था, उससे पूर्व राजसभा से, पुराहितों से और अधीन राजाओं से, प्रजा प्रतिनिधियों से अनुमति लेनी आवश्यक थी। सहमति, अनुमति के बिना राजतिलक नहीं हो सकता था। वैदिक राजतन्त्र में चुने हुए प्रतिनिधि, जिसमें प्राजा के भी प्रतिनिधि होते थे, राजा का चयन करते थे, जबकि लोकतन्त्र में भी जनता के चुने हुए प्रतिनिधि देश के शासक (प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति) और प्रदेश के शासक (मुख्यमंत्री) का चयन करते हैं। अन्तर यह है कि कर्तव्यविमुख राजा को 'राजकर्त्तारः' और प्रजा कभी भी पदच्युत कर सकते थे जबकि लोकतन्त्र में उसे हटाने के लिए पांच वर्ष पश्चात् आने वाले चुनाव की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। जब तक वे कितना ही धनसंचय करें, कितना ही शासकीय धन का दुरूपयोग करें, कितने ही ठाठ–बाट करें, जनता का कोई वश नहीं चलता।

अब बात करते हैं न्याय व्यवस्था और दण्डव्यवस्था की। वैदिक कालीन न्यायव्यवस्था अधिक न्यायपूर्ण, पक्षपात रहित, पारदार्शी, जटिलता रहित, व्यावहारिक, श्रेष्ठ प्रभावकारी, शीघ्रकारी, तर्कसंगत और मनोवैज्ञानिक थी। वह यथायोग्य दण्डव्यवस्था थी। आज की व्यवस्था 'यथा–कानून' दण्डव्यवस्था है। वैदिक न्याय या दण्डव्यवस्था के तीन आधारभूत तत्व थे– १. बौद्धिक स्तर या शिक्षा स्तर, २. सामाजिक स्तर या पद, ३. अपराध की प्रकृति और प्रभाव। यदि व्यक्ति उच्च शिक्षित है तो वह निश्चित रूप से अपराध के गुण–दोष और प्रभाव के ज्ञान में अधिक विवेकशील है। यदि कोई उच्च पद पर है और उच्च वर्ण एवं उच्च सामाजिक स्तर वाला है तो उसके अपराध का दुष्प्रीाव भी समाज पर उतना ही अधिक पड़ेगा। इसी प्रकार अपराध की गम्भीरता और उससे समाज या राष्ट्रपर पड़ने वाला दुष्प्रभाव है। ये जहां अधिक हैं वहां दण्ड भी अधिक है, जहां न्यून है, वहां दण्ड भी न्यून है। दण्ड व्यवस्था का उद्देश्य होता है–बुराइयों को रोकना, बुरों को सुधारना, समाज में सुख, शान्ति न्याय और व्यवस्था बनाये रखना। यह न्यायोचित ही है कि इन बिन्दुओं पर जिसका जितना दुष्प्रभाव पड़ता है उतना ही उसको हानिकारक माना जाना चाहिए और उसको तद्नुसार दण्ड देना ही न्यायपूर्ण दण्ड व्यवस्था कही जानी चाहिए।

वैदिक कालीन समाज में वर्ण–व्यवस्था थी, जो गुण, कर्म, योग्यता वाले व्यक्ति ब्राह्मण कहलाते थे, फिर क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र थे। इसी गुण–कर्म, योग्यता के अनुसार समाज में इनका अधिक सम्मान और प्रभाव सर्वाधिक था। यदि ये अपराध करते हैं तो निर्विवाद रूप में उस अपराध का बुरा प्रभाव भी उच्चता के अनुसार अधिक और व्यापक होगा। उससे उतना ही अधिक समाजिक व्यवस्था का आघात पहुंचेगा। अतः यह न्यायोचित है कि उसे उतना ही अधिक दण्ड दिया जाये। कम दण्ड उस पर प्रभावकारी सिद्ध नहीं होगा। इसी न्याय सिद्धान्त के अनुसार मनुस्मृति में दण्ड निर्णय करते हुए कहा गया है कि एक प्रकार के अपराध में जहां शूद्र को आठ गुणा दण्ड मिलता है तो वहां वैश्य को सोलह गुणा (दुगना), क्षत्रिय को बत्तीस गुणा (तिगुना), ब्राह्मण को चौंसठ गुणा (आठ गुणा) अथवा सौा गुणा (दस गुणा) अथवा एक सौ अट्ठाइस गुणा (सोलह गुणा) और राज को एक हजार गुणा दण्ड मिलना चाहिए (८.३३५–३४७)। यह भी निर्देश है कि अपराध करने पर राजा, आचार्य, माता पिता, मित्र, पुरोहित कोई भी क्षम्य नहीं होना चाहिए और यदि कोई शारीरिक दण्ड के बदले धन देकर छूटना चाहे तो उसको नहीं छोड़ना चाहिए। कितनी न्यायपूर्ण और मनोवैज्ञज्ञनिक व्यवस्था है।

वैदिक कालीन राज्यव्यवस्था में राजा कुल परम्परागत होने लगा था, यद्यपि ऐसा अपरिहार्य नहीं था। ऐतरेय ब्राह्मण (६.२३) में उल्लेख है कि राजपरिवार का न होते हुए भी जनतपुत्र अत्याति चत्त्वर्ती राजा बना था और उस समय सात्यहव्य वासिष्ठ ने उसका अश्वमेध यज्ञ कराया था। कुल परम्परागत होते हुए भी राजा स्वेच्छाचारी और निरंकुश नहीं था। वह न तो यूरोपीय व्यवस्था का 'किंग' था और न इस्लामी व्यवस्था का बादशाह। वह राज्य का मुखिया अथवा सभाध्यक्ष होता था। उसे राजसभा, धर्मसभा और न्यायसभा के अधीन रहकर राज्य संचालन करना होता था। अपने कर्तव्यों का ठीक से निर्वहन न कर सकने वाले राजा को या तो राजसभा पदभ्रष्ट कर देती थी, या प्रजा के दबाव में स्वयं पद छोड़ना पड़ जाता था। सम्राट सागर के अन्यायी पुत्र असमंजस को राज्याधिकार से वंचित होकर राज्य से निष्कासित होने का दण्ड भोगना पड़ा था। सत्यव्रत त्रिशंकु को दुर्व्यवहारी होने के कारण राज्यभ्रष्ट होना पड़ा था। ये दोनों अयोध्या के राजा थे। हस्तिनापुर के राजाओं में पारिक्षत् जनमेजय (द्वितीय) को ब्रह्महत्या करने या कराने के फलस्वरूप पदच्युत होना पड़ा था। वह प्रायश्चित करने के उपरान्त पुनः राजगद्दी पर बैठा। अभिमन्यु के पौत्र जनमजय (तृतीय) के साथ भी एक बार ऐसा ही हुआ। आर्यों के धार्मिक ग्रन्थ यजुर्वेद में विकृतियों का पक्ष लेने के कारण जनता में उसके प्रति इतना आक्रोश उमड़ा कि उसे भागर वन में शरण लेनी पड़ी। किसी प्रकार जब विवाद शान्त हुआ तो महर्षि याज्ञवल्क्य के आश्रय से उसका पुनः अश्वमेध अनुष्ठान हुआ और राजसिंहासन पर बैठा। देवों के राजा इन्द्र ने निर्दोष त्रिशिरा का वध कर दिया। प्रजा–विद्रोह के कारण उसे भागकर वन में छिपना पड़ा था। प्रायश्चित करने पर पुनः राज्यासीन हुआ। ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जिनमें राजा को किसी अपराध के कारण दण्डित अथवा पदभ्रष्ट होना पड़ा था। इस प्रकार राजा, राजकुमार आदि को भी न्यायसभा या प्रजा दण्ड देती थी।

आज की व्यवस्था में मूल विरोध तो यही है कि सम्मान व्यवस्था तो उच्च, ऐश्वर्यपूर्ण व सुविधापूर्ण है और दण्डव्यवस्था समान है, क्योंकि जो उच्च व्यक्ति योग्यता का या पद का सुविधा–फल तो सामान्य व्यक्ति से अधिक प्राप्त करता है किन्तु दण्ड के समय अयोग्यता, अपराध की फल प्राप्ति का जब अवसर आता है तो वह सामान्य व्यक्ति के समान मान लिया जाता है। जो व्यक्ति ऊँचे पद पर है, जिसका सामाजिक ओर बौद्धिक स्तर अधिक है, उसका उतना सामाजिक और बौद्धिक स्तर अधिक है, उसका उतना अधिक सम्मान, प्रभाव व परिचय है। वह उतना ही अधिक सुख–सुविधा का उपभोग करता है। स्पष्ट है कि यदि वह अपराध या भूल करेगा तो उसाक समाज पर दुष्प्रभाव भी उतना ही अधिक और गम्भीर होगा। जो मजदूर जैसा सामान्य व्यक्ति है उसका बौद्धिक स्तर, सम्मान, प्रभाव व परिचय भी सामान्य होता है। उसके अपराध का समाज पर नगण्य प्रभाव होगा। वस्तुतः न्याय–विरोध तो यह है कि उनका सुख–सुविधा सम्मान स्तर अधिक है और दण्डस्तर एक जैसा है। अपितु पक्षपातपूर्ण ढंग से पृथक है। सामान्य व्यक्ति को जेल में सामान्य सुविधाएं मिलती हैं जबकि विशेष को 'बी' या 'ए'

शेष पृष्ठ ६ पर

पृष्ठ ५ का शेष

वैदिक राज्यव्यवस्था की ...

श्रेणी की सुविधाएं उपलब्ध हैं। यह दण्ड व्यवस्था विपरीत और अमनोवैज्ञानिक है। समाज में हम प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं कि राजन्य और उच्चवर्ग का समाज के निम्न वर्ग पर जितना मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है उसकी तुलना में निम्न वर्ग पर सामान्य प्रभाव पड़ता है और उच्च वर्ग पर तो पड़ता ही नहीं। अतः उच्च और निम्न को एक दण्ड स्तर पर रखना न्याय के अन्तर्गत नहीं माना जा सकता।

इसे यथायोग्य दण्ड व्यवस्था भी नहीं माना जा सकता। एक उदाहरण से इसे समझा जा सकता है खेत चर जाने के अपराध में मेमने, भैंसे, हाथी को एक–एक डंडा लगा। इसका यह प्रभाव पड़ेगा कि बेचारा मेमना तो पीड़ा से मिमियाने लगेगा, भैंस पर सामान्य प्रतिक्रिया होगी। हाथी को डण्डे की अनुभूति ही नहीं होगी। यह यथायोग्य दण्ड नहीं हुआ। यह कहना भी भ्रान्ति है कि यह समान दण्ड हुआ क्योंकि समानता भी वस्तु सापेक्ष होती है। यथायोग्य और समान दण्ड तो लोक व्यवहार में प्रचलित हैं। वहां मेमने को डंडे से, भैंस को लाठी से, हाथी को अंकुश व पाश से और शेर को हंटर और पिंजरे से वश में किया जाता है। एक और उदाहरण आर्थिक दण्ड का लीजिए एक अत्यन्त निर्धन व्यक्ति एक हजार रूपयों कि आर्थिक दण्ड को भूखा रहकर या कर्ज लेकर चुका देगा, और समृद्ध सम्पन्न उसी दण्ड को जूती की नोंक पर रखकर देगा। इसे यथायोग्य और समान्य दण्ड तो क्या, दण्ड भी नहीं कहा जा सकता।

इसी अमनोवैज्ञानिक और अफलकारी दण्ड व्यवस्था का दुष्परिणाम है कि दण्ड की पतली रस्सी में में मेमने जैसे गरीब तो फंस जाते हैं और धन, पर, सत्ता, सम्पन्न भैंस, हाथी के सदृश शक्तिशली लोग उस रस्सी में या तो फंसते ही नहीं या तोड़कर निकल भागत हैं। और 'शेर' तो उल्टा गुर्राते हैं। आंकड़े इकट्ठे करके देख लीजिए, स्वतन्त्रता के बाद कितने निर्धन और निर्बल लोगों को सजा हुई है तथा कितने धन, पद सत्ता बाहु बली लोगों को। आर्थिक अपराधों में तो समृद्धजन आर्थिक दण्ड भरते रहते हैं और अपराध करते रहते हैं। वैदिक दण्ड व्यवस्था में ऐसा असन्तुलन और असामर्थ्य नहीं हैं।

आज अन्याय का दण्ड वादी–प्रतिवादी दोनों को भुगतना पड़ता है। उनका धन, श्रम, समय व्यर्थ जाता है। वैदिक व्यवस्था में अन्यय का जिम्मेदार न्यायाधीश और राजा को माना जाता था, और उन्हें उसका दण्ड भुगतना पड़ता था। इसलिए वे अन्याय नहीं करते थे। पूर्व पृष्ठों में राजाओं–राजकुमारों को प्राप्त दण्ड के कुछ उदाहरण दिये जा चुके हैं। यदि वादी मिथ्या अभियोग प्रस्तुत करता था तो वह भी दण्डनीय होता था। न्यायपूर्ण, पक्षपातरहित, यथायोग्य, शीघ्रकारी, प्रभावकारी, कठोर और मनोवैज्ञानिक दण्ड व्यवस्था का सुपरिणाम यह था कि अपराध नगण्य होते थे। न्यायव्यवस्था की एक उज्ज्वल झांकी देखने योग्य है। वाल्मीकिकृत रामायण में आता है–

''राममेवानुपश्चन्तो नाभ्यहिंसन परस्परम्।''

(वा. रामायण ६.१२८.१००)

''दृश्यते न च कार्मार्थी रामे राज्यं प्रशासति।''

(वही, ७.१२८.१००)

'राम के आदर्श चरित्र, त्वरित एवं कठोर न्याय को देखते हुए लोग एक–दूसरे के प्रति अपराध ही नहीं करते थे। इस कारण मुकदमें भी नहीं होते थे और परिणामस्वरूप राम के शासन में न्यायालय खाली पड़े थे।....' और आज, न्यायालयों में रोज–मेले से लगते रहते हैं। तब न कोई फीस थी, न स्टाम्प पेपर थे, न वकीलों का झमेला था, न जटिल तकनीकी प्रक्रिया न्याय को अन्याय बनाती थी। विशेष और सामान्य सभी प्रजाजन समान रूप से सीधे और त्वरित न्याय प्राप्त कर सकते थे। सामान्य जन की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति होती है कि वह राजन्य तथा उच्चवर्ग का अनुकरण को शीघ्र ग्रहण करता है। वर्तमान राजनीति का जो विद्रुप स्वरूप है, उसका कलुषित चित्र जन समान्य के सामने है। आजादी के इतने वर्षों में ही व्यवस्था रूपी चित्र विद्रूप हो चला है, अवश्य कलाकार या कला सामग्री में कहीं न कहीं कोई कमी रह गयी है।

प्रश्न उठता है कि जब भारत के अतीत के खजाने में एक परखी हुई, उपयोगी और न्यायोचित स्वर्णमय वैदिक राज्यव्यवस्था थी, तो उसकी उपेक्षा क्यों की गयी? वस्तुतः यह आत्महीनता बोध का परिणाम और सांस्कारिक पराधीनता का प्रीााव है। राज्यव्यव्था निर्माताओं ने दुनिया भर के सुविधाओं को उलटा पलटा, वे अपने वैदिक विधि शास्त्रों को क्यों भुला गये? आज नहीं तो कल इस बिन्दु पर विचार करना ही होगा कि वैदिक राज्य की उपेक्षा करके हमने क्या खोया, और क्या पाया?

गुड़ खाना सेहत के लिए है लाभकारी जानिये इसके बड़े फायदे

आजकल अधिकांश बच्चों व नौजवानों की जिंदगी से गुड़ का स्वाद गायब है मगर गुड़ का मीठा मौसम हर बरस आता है और सेहतयुक्त स्वाद बरकारार रखता है। गुड़ बनाने वाले गन्नों के खेतों के आसपास धूनी जमाकर गुड़ बनाते हैं, गुड़ खाने के शौकीन गरम–गरम गुड़ खाते हैं, पड़ोस में लगे गन्ने चूसते हैं और कुदरती मिठास जीवन में शरीर में भर लेते हैं। शहरी बच्चों को तो अब गन्ने भी कहां नसीब, मिल भी जाएं तो खाने से डरेंगे, उनके दांत जो इतने सुकोमल हैं हालांकि गन्ने खाने से दांत मजबूत होते हैं।

गन्नों को गुड़ में बदलने वाले बताते हैं कि लगभग आधा घंटे में २५ से ३० किलो गुड़ बन जाता है। आग की भट्टियों पर चार कड़ाहे रखे जाते हैं। पहले वाले में गन्ने का रस डालकर उबालते हैं। उबलते हुए रस में से मैल निकालते रहते हैं। रस पूरा निकल जाए इसके लिए मैल के साथ निकले रस को पौटलियों में टांग देतें है ताकि रस पूरा निकल आए। साफ हुए रस को अगली कड़ाही में पहुंचाते रहते हैं जहां वह और साफ होता रहता है तीसरी कड़ाही में और अधिक साफ होते गाढ़ा होने लगता है। चौथी कड़ाहीं में पहुंचकर रस का रूप बदल चुका होता है और स्वादिष्ट गन्ध वाले पेस्ट के रूप में दिखता है। गुड़ बनाने वाले इस रसीले पेस्ट को सीमेंटिड जगह पर फैलाते हैं, ठंडा होते होते लकड़ी के पलटे से घुमाते रहते हैं। हल्का सा जमने लगे तो लकड़ी की खुरपियों से उठाकर पानी लगे हाथों से गोल छोटी या कपड़े में लपेट कर बड़ी पाथियां बना लेते हैं। एक दिन में दस बारह कुंतल गुड़ बना देने वाले माहिर बातते हैं कि गुड़ में खूबसूरती लाने के लिए मीठा सोडा डाला जाता है। खाने वाले शैकीन लोग नारियल, बादाम, काजू, सौंफ छोटी इलायची या अन्य मेवे डलवाते हैं।

बुजुर्ग सही कहते हैं कि खाना खाने के बाद गुड़ के टुकड़े को मंह में डालकर टाफी की तरह घुमा–घुमा कर खाने से हमारी फूडपाईप में लगे खाने के रेशे साफ हो जाते हैं। पेट में पहुंचकर यही गुड़ खाना पचाने में सहायक बनता है। रात को भिगोए काले चने या कच्चे चने गुड़ के साथ यहू ही खाएं तो हॉर्स पावर्स जैसी ताकत हासिल की जा सकती है। सर्दी के मौसम में गुड की चाय सेहत के लिए काफी मुफीद समझी जाती है। बिस्किट, सब्जियों, चटनियों व डिशेज में गुड का प्रयोग उन्हें खासियत प्रदान करता है। गुड़ आयरन व ग्लूकोज युक्त होता है। गन्ने की बात भी कर ली जाए कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन, वसा व जल से युक्त गन्ने में विटामिन ए संक्रांमक रोगों से रक्षा व विटामिन बी पाचन शक्ति मजबूत करते हुए भूख व स्फूर्ति बढ़ता है। गन्ने के रस से दिमाग की कार्य क्षमता, स्मरण शक्ति बढ़ती है। पीलिया, खांसी में मूली के रस के साथ, कब्ज में व गैस में लाभकारी है। माना जाता है गन्ने के रस के नियमित सेवन से पथरी छोटे–छोटे टुकड़े हो मूत्र के माध्यम से बह जाती है। ताजे धनिया के हरे पत्ते, पुदीना व नींबू का रस गन्ने के रस में मिलाकर पीना सबसे लाभकारी बताया जाता है। गन्ने के रस में मिलाकर पानी सबसे लाभकारी बताया जाता है। गन्ने के रस का सेवन मोटे व्यक्तियों, दमा व सांस की बीमारियों से पीड़ितों को कम मात्रा में मेडिकल परामर्श से करना चाहिए। रस के अधिक सेवन से दस्त लग सकते हैं। रस हमेशा स्वच्छ व ताजा गन्ने का ही प्रयोग करना चाहिए। रस के अधिक सेवन से दस्त लग सकते हैं। रस हमेशा स्वच्छ व ताजा गन्ने का ही प्रयोग करना चाहिए। बदलते जमाने के साथ गुड़ को भी हमने गोबर कर दिया है। इसमें अब पहले जैसी बात कहां। दिलचस्प यह है कि अब तो गुड़ की मिठास बदलने व बढ़ाने के लिए इसमें चीनी भी मिला दी जाती है।

गन्ने चूसने व गरम–गरम गुड़ चखने का लुत्फ सचमुच निराला है, आपके पड़ोस में गर्म गुड़ तो संभवतः न मिले गन्ने का रस तो पिया ही जा सकता है।

– प्रहसन

१. एक व्यक्ति का ऑपरेशन किया जा रहा था। जब डॉक्टर उसका ऑपरेशन करने से पहले उसे बेहोशी का इंजेक्शन लगाने लगा तो अचानक वह व्यक्ति बोला– 'डॉक्टर साहब! जरा एक मिनट के लिए रुक जाइये।' डॉक्टर साहब रुक गये। तब उस व्यक्ति ने अपनी जेब से पर्स निकाला और पर्स में से रुपये निकालकर गिनने लगा। यह देखकर डॉक्टर साहब बोले– अरे भाई! अभी ऑपरेशन थियेटर में तुम्हें मेरी फीस देने की क्या सूझी? फीस तो मैं बाद में ले लूंगा।' व्यक्ति बोला– 'डॉक्टर साहब! मैं फीस नहीं दे रहा हूं। मैं तो अपने रुपये गिन रहा हूं ताकि अभी मुझे बेहोश करने के बाद में कोई रुपये निकाल न ले।'

२. एक भिखारी, एक अमीर आदमी के पास में गया और बोला–'सेठ जी! जैसा कि धर्म–ग्रन्थों में लिखा हुआ है कि – इस धरती पर रहने वाले सभी लोग एक ही ईश्वर की संतान हैं और इसी कारण से सभी लोग आपस में भाई–भाई हैं। अतः इस प्रकार से तो मैं भी आपका ही हुआ, इसीतिए मुझे भी आपकी सम्पत्ति में ऐ हिस्सा मिलना चाहिए।' यह सुनकर सेठ जी हंसने लगे और फिर उन्होंने भिखारी को दस पैसे का सिक्का दे दिया। यह देखकर भिखरी बोला–'वाह सेठ जी! आपकी सम्पत्ति तो करोड़ों में की और फिर भी आपकी सम्पत्ति में से मेरा केवल दस पैसे का ही हिस्सा हुआ?' सेठ जी ने जवाब दिया–'देखो, धरती पर रहने वाले सभी लोग ईश्वर की संतान हैं और सब भाई–भाई हैं। इस प्रकार, मुझे सबको अपनी सम्पत्ति में से हिस्सा देना है। इसीलिए तुम्हारे हिस्से में केवल दस पैसे आते हैं। अब जाओं, अपने हिस्से की रकम से मजे करो। लेकिन दुबारा हिस्सा मांगने मत आना क्योंकि–हिस्सा केवल एक बार ही दिया जाता है।'

"कर्तव्यनिष्ठा"

मेवाड़ के सिंहासन पर आरूढ़ महाराजा संग्रामसिंह एक दिन सहसा मृत्यु को प्राप्त हो गये। उनका ज्येष्ठ पुत्र विक्रमादित्य सिंहासन के लिए किञ्चित् भी योग्य नहीं था। राजपूत सरदारों ने उसे सिंहासन पर से उतार दिया। छोटे कुमार उदयसिंह अभी शिशु मात्र मात्र थे। उनका राज्याभिष्ज्ञेक तो कर दिया गया, किन्तु दासीपुत्र बनवारी को उनका संरक्षक बना दिया गया। बालक उदयसिंह की ओर से बनवीर राज्य का संचालन करने लगा।

राज्य का लोभ बड़ा ही आकर्षति होता है। बनवीर विचलित हो गया। एक रात्रि को वह नंगी तलवार लेकर अपने कक्ष से निकला और राजभवन में निश्शंक सोये हुए ज्येष्ठ राजकुमार विक्रमादित्य को मौत की नींद सुला दिया। राजमहल में दोने पत्तल उठाने वाला एक सेवक उसके इस कृत्य को देख रहा था। उसको कुछ आशंका हुई। वह उसी समय दौड़ा हुआ शिशु उदयसिंह की धाय पन्ना के पास गया। उसने उसको विक्रमादित्य की हत्या की बात बताई और यह भी कहा कि वह उसी तलवार को लहराता हुआ शायद इसी ओर आ रहा है।

पन्ना धाय ने क्षणभर में अपने कर्तव्य का निश्चय कर लिया था। उसने सोये हुए बालक उदयसिंह के कपड़े उतारे और शिशु को एक टोकरी में लिटा कर ऊपर से दोने पत्तों से उसको ढक दिया। उसने वह टोकरी उस सेवक को देकर कहा– "चुपचाप राजभवन से बाहर निकल जाओ। नगर के बाहर जाकर नदी के पास मेरी प्रतीक्षा करना।"

उसने अपने पुत्र चन्दन को उदयसिंह के कपड़े पहनाये और उसे उसके पलंग पर सुला दिया। चन्दनसिंह भी उदयसिंह की आयु का था। स्वामिभक्ति का यह अनन्य उदाहरण था। उसी समय बनवीरसिंह नंगी तलवार हाथ में लिये हुए उस ओर आ धमका। उसने पूछा–"उदय कहां हैं?"

हृदय पर पत्थर रखकर उसने अपने बच्चे की ओर संकेत कर दिया। बनवीर ने ही झटके में उस बालक का मस्तक शरीर से पृथक कर दिया और शीघ्रता से वहां से पलायन कर गया।

पन्ना अपने पुत्र का शव लिये नदी के तट पर पहुंची। स्थिति ऐसी थी कि वह रो भी नहीं सकती थी। पुत्र का शरीर उसने नदी में विसर्जित किया और स्वयं उदयसिंह को लेकर वहां से भाग निकली।

पन्ना इधर उधर भटकती फिरी और उदयसिंह का पालन पोषण किय फिर यथासमय पन्ना ने उदय को प्रकट किया। उसने अपने पराक्रम से बनवीर को उसके दुष्कृत्य का दण्ड दिया और उदयपुर के सिंहासन को भूषित किया।

पन्ना के अनुपम और अप्रतिम त्याग के कारण राणा के कुल की रक्षा हो पाई। आज भी समस्त संसार में पन्ना धाय का नाम बड़े आदर से स्मरण किया जाता है।

वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज सौमैया नगर बाराबंकी का २४ वां वार्षिकोत्स बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाय गया। कार्यक्रम में आर्य समाज के प्रचार–प्रसार के लिए विशेष बल दिया गया इस अवसर पर, मंजू आर्या उपदेशिका महाराजगंज, आचार्य शिवधन शास्त्री उपदेशक (भटनी देवरिया), डॉ० विधान चन्द्र भजनो उपदेशक– (अकबरपुर टॉडा), आचार्य धरमवीर भजनो उपदेशक बागपत, आचार्य श्री सत्य प्रकाश आर्य– भजनो पदेशक –बाराबंकी, धनश्याम आर्य– ढोलक वादक–अम्बेडकर नगर आदि महानुभाव उपस्थित रहे।

सभा मन्त्री जी ने अपना आशीर्वाद प्रदान किया

आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० के मन्त्री दिनांक २३/०४/२०१८ को सहारा स्डेड गुरूकुल लखनऊ प्रातः ७.०० बजे पहुँचे वहाँ छोटे–छोटे ब्रह्मचारियों के द्वारा यज्ञ और मन्त्रोच्चार सुनकर अति प्रसन्न हुए उन्होंने गुरूकुल संचालक आचार्य सोमव्रत शास्त्री के कार्य की प्रसंसा की और उन छोटे ब्रह्मचारियों को आर्य समाज की उन्नति के लिए मील का पत्थर माना और अपना आशीर्वाद देते हुए आचार्य सोमव्रत जी को का धन्यवाद दिया कि आज की महंगाई में भी यह गुरूकुल निःशुल्क चला रहे हैं ईश्वर इनको सहास प्रदान करें ताकि यह गुरूकुल ऊँचाईयों तक जा सके।

गुरूकुल महाविद्यालय ततारपुर– हापुड़

प्रवेश प्रारम्भ

हापुड़ नगर से गढ़रोड पर ५ कि०मी० दूर ततार पुर ग्राम में स्व० मुनीश्वरानन्द सरस्वती निवेदतीर्थ द्वारा स्वापित आचार्य कक्षा पर्यन्त मान्यता प्राप्त गुरूकुल में प्रवेश प्रारम्भ हो गए हैं स्थान सीमित है शीघ्रता करें नियमावली मंगाये। गुरूकुल में छात्रावास एवं योग्य विद्वानों द्वारा कड़ा अनुशासन पढ़ाई की सुन्दर व्यवस्था है।

शीश पाल सिंह
अध्यक्ष

ओम दत्त आर्य
प्रबन्धक

प्रेम पाल शास्त्री
प्रचार्य
मो० : ६४१०४७५५८०

पृष्ठ १ का शेष

अनावश्यक वस्तु ....

तो हमें उसे प्राप्त करने के लिए अपने साधनों और समर्थ्य का उपयोग करना चाहिये। अन्यथा दूसरों की भलाई के लिए अपने समय, साधनों और शक्ति का दान एवं उपयोग करना चाहिये। ऐसा करते हुए पक्षपात और संग–दोष से बचना भी चाहिये। परोपकारी होना बहुत उत्तम है, परन्तु परोपकार को अपना पेशा व व्यवसाय बना लेना अत्यन्त निन्दनीय है। इसी प्रकार परदुःखतातरता उत्तम है, परन्तु दूसरों को उनके दुःख को बतलाना और उसके दूर करने में सहयोग न देना, कोई उत्तम बात नहीं है। अपितु यह तो दुःखी को और भी अधिक दुःखी करने की बात है। वर्तमान काल में जो दुःख को जतलाना और उसके दूर करने में सहयोग न देना, कोई उत्तम बात नहीं है। अपितु यह तो दुःखी को और भी अधिक दुःखी करने की बात है। वर्तमान काल में जो दुःखों की अभिवृद्धि देखने में आ रही है, उसका एक बड़ा कारण पेशेवर परोपकारियों के प्रपंच को भी समझना चाहिए। आजकल के अधिकांश उपदेशक, अध्यापक, वकील और डाक्टर पेशेवर परोपकारी ही तो होते हैं। तभी तो उल्टे परिणाम सामने आ रहे हैं। कहा है।–

सफाइयां हो रही हैं जितनी, दिल उतने ही हो रहे हैं मैले।
अंधेरा छा जाएगा जहां में, अगर यही रोशनी रहेगी।।

ऐसा होना भी चाहिए–

तुम्हारी तहजीव अपने खंजर, से आप ही खुदकुशी करेगी।
जो शाख–ए– नाजुक पै आशियाना, बनेगा नापायदार होगा।।

जब मनुष्य शुभ विचारों से प्रेरित होकर, शुभ कार्यों को आरम्भ करता है और शुभ उपायों एवं साधनों का ही आवलम्बन करता है, तभी उत्तम परिणाम और शुभ फल प्राप्त होते हैं। लोग अनुचित उपायों से ही शुभ फलों की प्राप्ति की आशा किया करते हैं। यह कैसी विचित्रता है?

अपरिग्रह का पालन करने वाले साधक का स्वरूप या चरम विकास तो किसी– किसी अवधूत के जीवन में ही देखने में आता है, जो कि बिना विशेष साधनों के और बिना किसी विशेष संगी–साथी के ही अपने सब काम चला लेता है। ऐसा सर्वस्वत्यागी पाणि पात्र और दिगम्बर बनकर रहना, सब किसी के लिए हितकर नहीं, अथवा यह सबके वश की बात नहीं, तथापि अपनी आवश्यकताओं को कम से कम रखना, बढ़ाना नहीं और निरन्तर घटाना, घटाते हो जाना, यह तो अपेक्षाकृत एक सरल कार्य है। यही वह कार्य है, जो अपरिग्रह ब्रह्मजनों को करना है। यदि संसार के सभी सभ्यता और शिष्टता के अभिमानी सज्जन पुरूष मिलजुलकर अपरिग्रह–व्रत का पालन करें, तो संसार के सभी झगड़े–बखेड़े तुरन्त ही शान्त हो जायें।

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर/फैक्स: ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधान- ०९४१२७४४३४१, मंत्री- ०९८३७४०२१९२, व्यवस्थापक- ९३२०६२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com

सेवा में
.....
.....

प्रदेश के आर्य समाजों के कार्यक्रमों की झलकियां

सत्यनारायण वैदिक ट्रस्ट, लखनऊ द्वारा वेद प्रचार

आर्य समाज तिलहर शाहजहांपुर द्वारा वेद प्रचार

गुरूकुल पूठ में यज्ञ सम्पन्न कराते हुए स्वामी अखिलानन्द सरस्वती जी

आर्य समाज सैवैया नगर बाराबंकी में वेद प्रचार कार्यक्रम सम्पन्न

विविध ग्रामों में आर्य समाज का प्रचार करते ग्रामवासी

आर्य समाज सहारा स्टेट में यज्ञ सम्पन्न कराते हुए स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती जी

गुरूकुल महाविद्यालय रूद्रपुर शाहजहांपुर में चरित्र निर्माण शिविर पर व्यायाम प्रर्दशन करते हुए तथा विधायक रोशन लाल जी वर्मा जी का सम्मान करते हुए गुरूकुल के आचार्य गण

गुरूकुल महाविद्यालय पूठ-गढ़मुक्तेश्वर हापुड़ (उ०प्र०) में प्रवेश प्रारम्भ

गंगा किनारे गढ़मुक्तेश्वर के निकट गुरूकुल म०वि० पूठ में प्रवेश प्रारम्भ हैं। यहाँ शान्त वातावरण है। उ०प्र० मा०सं० शि० परिषद् लखनऊ द्वारा माध्यमिक एवं सं० सं० वि० वि० वाराणसी से आचार्य तक मान्यता प्राप्त है आदर्श गौशाला का शुद्ध दूध एवं योग्य शिक्षकों द्वारा कड़ा अनुशासन पढ़ाई की सुन्दर व्यवस्था है।

धनुर्विद्या सिखाने की व्यवस्था है आर्य वीर दल की शाखा द्वारा व्यायाम प्रशिक्षण केन्द्र के साथ–साथ संस्कार प्रशिक्षण की भी सुन्दर व्यवस्था है। प्रवेश परीक्षण के बाद ही प्रवेश होगा नियमावली मंगाकर शीघ्रता करें।

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती	आचार्य राजीव	आचार्य दिनेश	अखिलानन्द
संचालक	प्राचार्य	व्यवस्थापक	अधिष्ठाता
९८३७४०२१९२	९४१०६३८४४४	९४११०२९७७५	

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।